भक्ति समर्पण एवं विश्वास

महाभारत के रचियिता **वेदव्यास जी** ब्रह्म नदी के तट पर बड़े ही उदास, बड़े ही खिन्न बैठे हुये थे। नदी कल-कल स्वरों में बह रही थी। सामने पर्वत की चोटी पर बिछी हुई बर्फ के ऊपर सूर्य की सुनहरी किरणें खेल रही थी, पर्वत के नीचे वृक्षों पर कल कंठों से पक्षी गा रहे थे, पर वेदव्यास जी के लिये प्रकृति का वह वैभव बिल्कुल निस्सार था वे उदास मुख विचारों में खोये हुये थे। वेदव्यास जी अपने भीतर घुस कर अपनी उदासी का कारण खोज रहे थे। वे सोच रहे थे, उनकी तो किसी में कोई आशक्ति नहीं, फिर उनके मन में यह खिन्नता किस बात के लिये? बहुत खोजने पर भी वेदव्यास जी कुछ खोज नहीं पा रहे थे, बहुत सोचने पर भी कुछ सोच नहीं पा रहे थे। आखिर उन्होंने सोचा, मन की यह उदासी इस तरह तो दूर होने वाली नहीं, इसे दूर करने के लिये आसन लगा कर बैठ गये। उन्होने ध्यान में नेत्र बंद कर लिये, कितने क्षण बीत पाये थे कुछ कहा नहीं जा सकता। सहसा नारद जी वीणा के तारों पर मधुर स्वर-लहरी में प्रभु की प्रार्थना गान करने लगे, वेदव्यास जी का ध्यान टूट गया। उन्होंने नेत्र खोलकर देखा, वीणा बजाते हुये महर्षि नारद खड़े थे। उन्होंने उठकर नारद जी को प्रणाम किया, उन्हें बैठने के लिये आसन प्रदान किया। नारद जी ने आसन पर बैठते हुये वेदव्यास की ओर देखा और देखते ही देखते प्रश्न किया- **'' वेदव्यास जी! आपके मुख-मण्डल पर यह उदासी क्यों?** लगता है, आप अत्यधिक **चिंतित** हैं। वेदव्यास जी ने **नि:श्वास** छोड़ते हुये कहा- **''हाँ महर्षि, मैं उदास हूँ, बहुत ही चिंतित हूँ।''** नारद जी ने रहस्यमयी दृष्टि से वेदव्यास की ओर देखते हुये पुन: कहा- उदासी और चिंता का कारण? वेदव्यास जी ने चिंतित भरे स्वर में उत्तर दिया कारण तो मुझे भी नहीं मालूम है महर्षि! कारण जानने का मैंने प्रयत्न किया पर जान न पाया। नारद ने वेदव्यास की ओर देखते हुये पुन: कहा आश्चर्य है? **महाभारत सदृश्य पुनीत महाकाव्य** की रचना करने वाले वेदव्यास के मुख पर उदासी! वेदव्यास जी, **आपके द्वारा रचित महाभारत को पढकर कोटि-कोटि मनुष्य चितांओ से मुक्त हो जायेंगे** पर आप स्वयं चिंताग्रस्त हो उठे हैं, यह कितने विस्मय की बात हैं। वेदव्यास जी ने सोचते हुये उत्तर दिया-हाँ महर्षि! मैंने महाभारत महाकाव्य की रचना की है। मैंने आजीवन सदाचरण किया है, पर फिर भी मैं चिन्ताग्रस्त हूँ मेरी समझ में नहीं आ रहा है क्या कारण से मैं चिन्ताग्रस्त हूँ, नारद ने कहा आपका **महाभारत महाकाव्य हिंसा- प्रतिहिंसा** से भरा हुआ है। हो सकता है, उसी **हिंसा- प्रतिहिंसा** के कारण आपका मन खिन्न हो गया। **वेदव्यास जी** बोले- हो सकता है मेरी खिन्नता का कारण वही हो। मैं उसके लिये जप करूंगा नारद जी। नारद ने कहा **माता सरस्वती** ने आपको **ग्रन्थ रचना** के लिये भेजा है, जप के लिये नहीं, तप के द्वारा केवल आपका ही कल्याण होगा पर **ग्रन्थ से कोटि-कोटि मनुष्यों का कल्याण** होगा। नारद जी की बात सुनकर वेदव्यास जी विचारों में उलझ गये उन्होंने नारदजी की ओर देखते हुये कहाँ ग्रन्थ रचना तो मैं कर चुका हूँ महाभारत से बढ़ कर ग्रन्थ मे अब नहीं लिख सकता, नारद ने कहा वेदव्यास जी,

आपकी ग्रन्थ रचना अभी अधूरी है। आपने महाभारत की रचना तो की, पर अभी तक **महाभारत के सूत्रधार** के चरित्र का गान नहीं किया जब तक आप उसके चरित्र का गान नहीं करेंगे, आपकी ग्रन्थ रचना अधूरी रहेगी। आपने उनके चरित्र का गान नहीं किया, यही आपकी **उदासी** का कारण भी हैं। यह सुनकर वेदव्यास जी विचारों की **तरंगों में डूब गये।** नारद ने वेदव्यास जी के मन को **झकझोरते** हुये पुनः कहा वेदव्यास जी, महाभारत में आदि से लेकर अंत तक **जिस लीला पुरूष का चरित्र बोल रहा है, प्रत्येक घटना में जिसकी प्रेरणा समाई हुई है और जिसने महाभारत के सभी पर्दों को उद्‌घाटित किया है, उस लीला-पुरूष श्री कृष्ण के चरित्र का गान कीजिये, उनके चरित्र-गान से ही आपकी खिन्नता दूर होगी, आपको नया जीवन प्राप्त होगा।**' यह कहकर नारद वेदव्यासजी के मन को झकझोर वीणा बजाते हुये चले गये और वेदव्यास श्रीकृष्ण के चरित्र का गान लिखने लगे। उन्होंने श्रीमद्भागवत पुराण की रचना की, **सही अर्थों में आज वेदव्यास जी के द्वारा लिखे हुये ग्रन्थ से कोटि-कोटि मनुष्यों का कल्याण हो रहा है।** नदियां सूख जायेगी, पर्वत अपने स्थानों को छोड़ देंगे, पर **वेदव्यास जी की वाणी गूंजती ही रहेगी।**

एक तो सागर है, लहरें आती है और चली जाती है और सागर बना रहता है। लहरें सागर से जरा भी अलग नहीं है, फिर भी लहरें सागर नहीं है। **लहरें सिर्फ सागर से उठा हुआ स्वरूप हैं आकार हैं, बनेंगे, मिटेंगे।** जो लहर बनी है, उसको लहर कहना बेकार है। लहर का मतलब यह है कि आयी और गयी। लहर शब्द का भी मतलब यही है, उठी भी नहीं कि जा चुकी। जिसमें उठती है वह सदा है, जो उठती है वह सदा नहीं है। तो **सदा की छाती पर परिवर्तनशील का नृत्य है।** सागर तो अजन्मा है, लहर का जन्म होता है। सागर की कोई मृत्यु नहीं है, लहर की मृत्यु होती है। लेकिन लहर भी अगर यह जान ले कि मैं सागर हूँ तो जन्मने और मरने के बाहर हो गई। जब तक लहर समझती है कि मैं लहर हूँ, तभी तक जन्मने और मरने के भीतर है। जो भी है, वह अजन्मा है, उसकी कोई मृत्यु नहीं हैं। क्योंकि जन्म होगा कहां से ? शून्य से कुछ पैदा नहीं होता। मृत्यु होगी कहां? शून्य में कुछ खोता नहीं। तो जो भी है-अस्तित्व वह तो सदा हैं समय कुछ भी अंतर नहीं कर पाता। क्योंकि हमारी इंद्रियों की पकड़ में सिर्फ रूप आता है, आकार आता है। नाम रूप के अतिरिक्त हमारी इंद्रिया कुछ भी पकड़ नहीं पातीं।

सब सिर्फ हमारी छोटी आँखों के फर्क है। **अगर समय अनंत है, न उसका कोई प्रारम्भ है और न कोई अंत है, तो सत्तर साल में और सात क्षण में कौन सा फर्क होगा?** हाँ, समय अगर सीमित हो, सौ ही साल का हो, तो फिर सत्तर साल में और सात क्षण में फर्क होगा। सात क्षण बहुत छोटे होंगे, सत्तर साल बहुत बड़े होंगे। लेकिन अगर दोनों तरफ कोई सीमा नहीं है, न इस तरफ कोई प्रांरभ है, न उस तरफ कोई अंत है, तो सात क्षण में और सत्तर साल में क्या फर्क है? हमें फिर भी भ्रम हो सकता है कि

सात क्षण में और सत्तर साल में कोई फर्क है। लेकिन अगर हम समय की पूरी धारा को देखे तो क्या फर्क है? अनंत की तुलना में सात क्षण भी उतने ही है, सत्तर वर्ष भी उतने ही हैं, **कितनी देर में फूट जाता है बुलबुला, यह बड़ा सवाल नहीं है। बनता है तभी से फूटना शुरू हो जाता है।**

इसलिये मैंने कहा कि शरीर को देख कर कहें। शरीर से मेरा मतलब है, नाम–रूप से निर्मित जो दिखाई पड़ रहा है और आत्मा से मेरा मतलब है सागर और शरीर से मेरा मतलब है लहर और ये दोनों ही बाते एक साथ समझनी जरूरी है। नहीं तो इन दोनों के बीच अगर भ्रम पैदा हो तो जगत की सारी कठिनाईयां खड़ी होती है। भीतर हमारे तो वह है जो कभी मर नही सकता। इसलिये गहरे में हमे सदा ही ऐसा लगता है, मैं कभी नहीं मरूंगा। लाखों लोगों को हम मरते हुये देख ले, फिर भी भीतर यह प्रतीत नहीं होता कि मैं मरूंगा इसकी गहराई में कही कोई ध्वनि पैदा नहीं होती कि मैं मरूंगा। सामने ही लोग मरते रहें और फिर भी हमारे भीतर न मरने का भाव ही सजग रहता है। किसी गहरे तल में, **'मैं नहीं मरूंगा'** यह बात हमें जाहिर ही होती है। माना कि बाहर के तथ्य

झुठलाते है और बाहर की घटनायें कहती है कि ऐसा कैसे हो सकता है कि मैं नहीं मरूँगा। तर्क कहते है कि जब सब मरेंगे तो तुम भी मरोगे। लेकिन सारे तर्को को काट कर भी भीतर कोई स्वर कहे ही चला जाता है कि, मैं नहीं मरूंगा।

इस जगत में कोई आदमी कभी भरोसा नहीं करता कि वह मरेगा। इसलिये तो हम इतनी मृत्यु के बीच जी पाते है, नहीं तो इतनी मृत्यु के बीच तत्काल मर जाये। जहाँ सब मर रहा है, वहाँ प्रतिपल हर चीज मर रही है, वहाँ हम किस भरोसे जीते है? **आस्था क्या है जीने की? ट्रस्ट कहाँ है जीने का? किसी परमात्मा में नहीं है।** आस्था इस आधार पर खड़ी है भीतर कि हम कितना ही मृत्यु कहे कि मरते है, भीतर कोई कहे ही चला जाता है कि मर कैसे सकते है? **कोई आदमी अपनी मृत्यु को कंसीव नहीं कर सकता। उसकी धारणा नहीं बना सकता कि मैं मरूंगा।** कैसी ही धारणा बनाये, वह पायेगा कि वह तो बचा हुआ है। अगर वह अपने को मरा हुआ भी कल्पना करे और देखे तो भी पायेगा कि मैं देख रहा हूँ, मैं बाहर खड़ा हूँ। मृत्यु के भीतर हम अपने को कभी नहीं रख पाते, सदा ही बाहर खड़े हो जाते हैं। मृत्यु के भीतर कल्पना में भी रखना असंभव है। सत्य में रखना तो बहुत मुश्किल है,

हम कल्पना भी नहीं कर सकते ऐसी जिसमें मैं मर गया। क्योंकि उस कल्पना में भी मैं बाहर खड़ा देखता रहूँगा। वह कल्पना करने वाला बाहर ही रह जायेगा, वह मर नहीं पायेगा।

बहुत अद्भूत बात है कि जीवन की जो भ्रांतियां है वे हमारे जानने से मिटने वाली भ्रांतियां नहीं है। जानने से सिर्फ हमारी पीड़ा मिटती है। जैसे शंकर ने निरंतर उदाहरण लिया है कि राह पर पड़ी रस्सी और अंधेरे में दिखाई पड़ जाती है कि सांप है। लेकिन वह उदाहरण बहुत ठीक नहीं है। क्योंकि उसके पास आ जाने पर पता चल जाता है कि रस्सी है और एक दफा पता चल जाये तो आप कितने ही दूर चले जाये, फिर आपको सांप दिखाई नहीं पड़ सकता। लेकिन जीवन का भ्रम इस तरह का नहीं है। जीवन का भ्रम ऐसे है जैसे आप सीधी लकड़ी को पानी में डाल दें, वह तिरछी दिखाई पड़ती है। आप बाहर निकाल कर फिर देख लें कि सीधी है, फिर पानी में डाल दें, वह फिर तिरछी दिखाई पड़ती है। हाथ डाल कर पानी में टटोल लें, पायेंगे कि सीधी है, लेकिन फिर भी तिरछी दिखाई पड़ती है। आपके ज्ञान से उसके तिरछे होने का रूप नहीं मिटता हां, लेकिन तिरछी है, इसका भ्रम मिट जाता है।

अब आप मान कर चलेंगे कि लकड़ी सीधी है और देखते रहेंगे कि लकड़ी तिरछी है। यह दो तल पर बंट जायेगी बातें-जानने के तल पर लकडी सीधी होगी, देखने के तल पर लकड़ी तिरछी होगी। इन दोनों में कोई भ्रांति नहीं रह जायेगी। जीने के तल पर शरीर होगा, बाहर के तल पर शरीर होगा, अस्तित्व के तल पर आत्मा होगी। खो नहीं जायेगा;ऐसा नहीं कि ज्ञानी को संसार खो जाता है। ज्ञानी को संसार ठीक वैसा ही होता है जैसा आपको होता है। शायद और प्रगाढ़ होकर साफ होकर होता है और स्पष्ट होता है। रोआं-रोआं का साफ उसकी दृष्टि में होता है। खो नहीं जाता। लेकिन अब वह भ्रम में नहीं पड़ता। अब वह जानता है कि रूप उसकी इंद्रियों से पैदा हुये है जैसे लकड़ी पानी के भीतर तिरछी दिखाई पड़ती है, क्योंकि किरणों का रूपान्तरण हो जाता है।

पानी में किरणों की यात्रा बदल जाती है। किरणें थोड़ी झुक जाती है, उनके झुकाव की वजह से लकड़ी तिरछी दिखाई पड़ती है। हवा में किरणें एक तरह से चलती है, झुकती नहीं है, इसलिये लकड़ी तिरछी दिखाई नहीं पड़ती। लकड़ी तिरछी नहीं होती है, लकड़ियां जिस किरण के आधार पर दिखाई पड़ती है, वह तिरछी हो जाती है। लेकिन वह तो दिखाई नहीं पड़ती। किरण तिरछी हो जाती है, तो किरण के तिरछे होने की वजह से लकड़ी तिरछी दिखाई पड़ती है। **अस्तित्व तो जैसा है वैसा है, लेकिन इंद्रियों से गुजर कर जो ज्ञान की किरण है, वह थोड़ी तिरछी हो जाती है। जानने का जो ढंग है, वह बदल जाता है, माध्यम की वजह से।** जैसे कि मैंने एक नीला चश्मा लगा लिया, अब चीजें नीली दिखाई पड़ने लगी। मैं चश्मा उतार कर नीचे देखता हूँ, देखता हूं चीजें सफेद है। फिर चश्मा लगाता हूं, वे फिर नीली दिखाई पड़ती हैं। अब मैं जानता हूं कि चीजें सफेद हैं लेकिन फिर भी चश्मे से नीली दिखाई पड़ती है। अब मैं यह भी जानता हूँ कि यह चश्मे की वजह से नीली दिखाई पड़ती है, बात खतम हो गई। चीजें नीली दिखाई पड़ती रहेंगी, और मैं जानूंगा भलीभांति कि चीजें सफेद हैं।

PMYV

एक मूर्ख राजा के राज्य में तीन पैसे में एक किलो मिठाई और एक किलों काजू मिलते थे। एक गुरू और शिष्य, अलग-अलग राज्यों में भ्रमण करते हुये मूर्ख राजा के राज्य में पहुंचे। शिष्य हमेशा गुरूजी के साथ रहता था, उनकी सेवा करता था और उनके लिये खाना लाता था। जब शिष्य उस राज्य में पहुँचकर गुरूजी के लिये खाना लाने गया तब उसने खाने की जगह पर बहुत सारी मिठाइयां लाई। मिठाई खाने के बाद गुरूजी ने शिष्य से सवाल पूछा, 'आज खाने में मिठाइयां कैसे लाई, इतने पैसे कहां से आये?' शिष्य ने बताया 'ज्यादा पैसे तो जमा नहीं हुये थे मगर **इस राज्य में तीन पैसे में एक किलो मिठाई मिलती है और दाल महंगी मिलती है। मैने सोचा मिठाई सस्ती मिल रहीं है तो मिठाई खायेंगे इसलिये मिठाई लेकर आया हूं।**

शिष्य की बातों से गुरूजी समझ गये कि **यह राज्य अंधेर नगरी है।** उन्होंने तुरंत शिष्य से कहा, **'अब हम यहां एक पल भी नहीं रहेंगे,** यहां से तुरंत आगे की यात्रा के लिये निकलेंगे' मगर शिष्य ने गुरूजी से कहा, मुझे यह जगह बहुत पसंद आई है, मैं तो यही रहना चाहता हूं इसलिये हम अभी नहीं बल्कि कुछ दिनों के बाद यहां से आगे जायेंगे। गुरूजी ने शिष्य को समझाया, **'यह मूर्ख राजा का राज्य है,** यहां ज्यादा दिन रहना ठीक नहीं है' मगर शिष्य ने गुरूजी की एक न सुनी, उसने जिद की कि मैं तो यहीं रहूंगा। अपनी जिद पर अटल रहते हुये शिष्य उसी राज्य में रहने लगा और गुरूजी वहां से आगे की यात्रा के लिये चल पडें।

कुछ दिनों बाद **उस राज्य में एक घटना हुई। राज्य से एक इंसान जा रहा था। उस पर एक दीवार गिर गई और वह मर गया। मरने वाले इंसान का भाई राजा के पास गया और उसने कहा, 'मेरे भाई पर फलां-फला घर की दीवार गिरने की वजह से वह मर गया इसलिये उस घर के मालिक को सजा दी जाये।'** यह सुनकर राजा ने अपने सिपाहियों को आदेश दिया जिस घर की दीवार गिरने से इस इंसान का भाई मर गया उस घर के मालिक को पकड़कर हमारे सामने पेश किया जाय। सिपाहियों ने तुरंत राजा की आज्ञा का पालन किया और उस मकान मालिक को पकड़कर राजा के सामने हाजिर किया। राजा ने **मकान मालिक से कहा, तुम्हारे घर की दीवार एक इंसान पर गिर जाने की वजह से वह मर गया इसलिये तुम्हें फांसी पर चढ़ाया जायेगा। मकान मालिक ने अपनी सफाई में कहा महाराज इसमें मेरी कोई गलती नहीं है। इसमें उस मिस्त्री की गलती है। मिस्त्री ने कच्ची दीवार बनाई इसलिये वह गिर गई।**

राजा ने कहा 'ठीक है, उस मिस्त्री को पकड़कर लाओ, सिपाही फिर दौड़कर गये और मिस्त्री को पकड़कर लाये। **राजा ने उससे कहा, तुम्हारी गलती की वजह से कच्ची दीवार एक इंसान पर गिरी और वह मर गया इसलिये तुम्हें फांसी की सजा दी जायेगी।** मिस्त्री ने भी अपनी सफाई देते हुये कहा, इसमें मेरी गलती नहीं है। इसमें **उस इंसान की गलती है, जो सिमेंट में पानी मिला रहा था। सिमेंट में ज्यादा पानी मिलाने के कारण दीवार कच्ची बनी इसलिये वह उस इंसान पर गिर गई और वह मर गया।'**

राजा ने अपने सिपाहियों को फिर से आदेश दिया कि जाओं, उस इंसान को पकड़कर लाओ, जिसने सीमेंट में ज्यादा पानी मिलाया।' उसे भी राजा के सामने लाया गया। उसने दुहाई दी कि महाराज! इसमें मेरी कोई गलती नहीं है। मैं जब सीमेंट में पानी मिला रहा था तब वहां से **एक औरत गुजर रहीं थी। वह औरत एक नई साड़ी पहनकर जा रहीं थी। मेरा पूरा ध्यान वहां था इसलिये सीमेंट में ज्यादा पानी डाल दिया। उसकी बात सुनकर राजा को लगा कि वह सही कह रहा है।**

राजा ने उस औरत को दरबार में हाजिर करने का हुकूम दिया। उस औरत को दरबार में लाया गया और बताया गया, तुम्हें फांसी मिलेगी क्यांकि तू नई साड़ी पहनकर जा रही थी, जिससे इस इंसान का पूरा ध्यान तुम्हारी तरफ गया, और उसने सीमेंट में ज्यादा पानी मिलाया और मिस्त्री ने कच्ची दीवार बनाई, वह दीवार एक इंसान के ऊपर गिरी और वह इंसान मर गया। अब तुम्हें सजा दी जायेगी।' उस औरत ने अपनी सफाई पेश की कि 'इसमें मेरी कोई गलती नहीं है, मेरी सहेली ने मुझे नई साड़ी दी थी इसलिये मैंने पहनी थी।' राजा को लगा कि वह ठीक कह रही है।

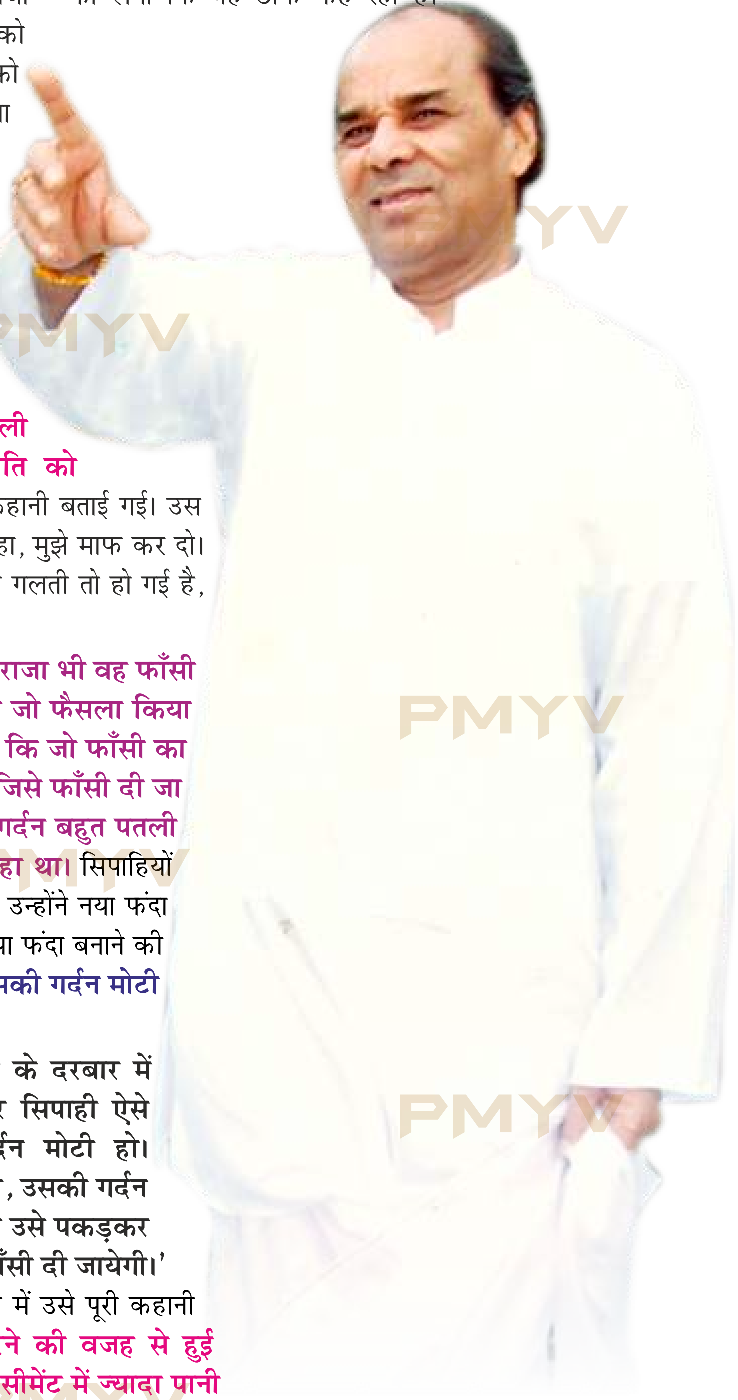

फिर राजा ने सिपाहियों से कहा, 'इस औरत की सहेली को पकड़कर लाओ।' सिपाहीं ने उस औरत की सहेली को पकड़कर लाए। राजा ने कहा, तुम्हें फाँसी पर चढ़ाया जायेगा क्योंकि तुमने अपनी नई साड़ी अपनी सहेली को दी। नई साड़ी पहनकर वह बाजार से निकली, उसे देखने की धुन में मजदूर ने सीमेंट में ज्यादा पानी मिला दिया। जिस वजह से मिस्त्री ने कच्ची दीवार बनायी और वह दीवार एक इंसान पर गिर गई और वह मर गया इसलिये तुम्हें फाँसी की सजा मिलेगी।' सहेली ने कहा, 'नही, इसमें मेरी कोई गलती नहीं है। **यह साड़ी मेर पति ने मुझे तोहफे में दी थी, जो मैंने अपनी सहेली को पहनने के लिये दी थी।' राजा ने उसके पति को पकड़कर लाने का आदेश दिया।** पति को भी पूरी कहानी बताई गई। उस पति के पास और कुछ कारण नहीं था। उस बेचारे ने कहा, मुझे माफ कर दो। मैं यह गलती दोबारा नहीं करूँगा।' राजा ने कहा, 'तुमसे गलती तो हो गई है, अब **तुम्हें फाँसी की सजा दी जायेगी।'**

जब उस इंसान को फाँसी पर चढ़ाया जा रहा था तब राजा भी वह फाँसी देखने के लिये आया। राजा को देखना था कि उसने जो फैसला किया है, उसका अंजाम क्या होता है। उस वक्त देखा गया कि जो फाँसी का फंदा बनाया गया था, वह बड़े आकार का था और जिसे फाँसी दी जा रही थी, वह इंसान बहुत दुबला-पतला था। उसकी गर्दन बहुत पतली थी इसलिये फंदा उसके गले में ठीक से नहीं बैठ रहा था। सिपाहियों को लगा कि उसके लिये नया फंदा बनवाना पड़ेगा। जब उन्होंने नया फंदा बनवाने के लिये राजा से आज्ञा ली तब राजा ने कहा, 'नया फंदा बनाने की जरूरत नहीं है। **एक ऐसा इंसान पकड़कर लाओ, जिसकी गर्दन मोटी हो।'**

आप समझ सकते है कि एक मूर्ख राजा के दरबार में निर्दोष लोग भी कलाबाजियाँ खाते रहते है! फिर सिपाही ऐसे इंसान को ढूँढने के लिये निकले, जिसकी गर्दन मोटी हो। सिपाहियों को जो सबसे ज्यादा मिठाइयाँ खा रहा था, उसकी गर्दन सबसे मोटी मिली। उन्हें वही शिष्य मिला और उन्होंने उसे पकड़कर राजा के पास लाया। राजा ने शिष्य से कहा, 'तुम्हें फाँसी दी जायेगी।' उसने पूछा, 'मुझे क्यो फाँसी दी जायेगी? तब जवाब में उसे पूरी कहानी बताई गई कि **'एक इंसान की मृत्यु दीवार के गिरने की वजह से हुई क्योंकि मिस्त्री ने दीवार कच्ची बनाई थी। मजदूर ने सीमेंट में ज्यादा पानी मिला लिया था क्योंकि वह मजदूर उस औरत को देख रहा था, जिसने नई साड़ी पहनी थी। वह साड़ी उस औरत को उसकी सहेली ने दी थी। सहेली को उसके पति ने साड़ी दी थी। उसके पति की गरदन बहुत पतली है, जिससे फाँसी को फंदा ठीक से बैठता नहीं है, तुम्हारी गरदन मोटी है इसलिये तुम्हें फाँसी दी जायेगी।' यह सब सुनकर शिष्य ने कहा, 'यह कैसा तर्क है? उसकी गरदन पतली है और मेरी गरदन मोटी।' उस शिष्य ने अपने निरपराध होने का सबूत राजा को देने के लिये अपनी बुद्धि का पूरा इस्तेमाल किया।** फिर भी राजा नहीं माना तब उस शिष्य को पहली बार पता चला कि **बुद्धि से कुछ नहीं होता।** इसी बात का

एहसास दिलाने के लिये गुरूजी उसे छोड़कर चले गये थे। असल में वे छोड़कर नहीं गये थे, वे उस शिष्य के आस-पास ही थे और वे सब देख रहे थे। जब शिष्य ने बुद्धि से पूरा काम कर लिया तब उसे गुरूजी की याद आई। **गुरूजी की याद आना भी बड़ी कृपा है।** शिष्य को याद आया कि गुरूजी ने सही कहा था कि **मुर्ख राजा के राज्य में रहना खतरनाक है।** जिस राज्य में राजा मिठाई सस्ती और दाल महँगी बेचता है, वहा कुछ गड़बड़ है। वहाँ कोई शुभकार्य नहीं हो सकता। **जब उसने अपने गुरूजी को याद किया तो वहां आ गये। उसने गुरूजी से माफी माँगी कि 'आपने कहा था कि यहाँ मत रहो मगर मैंने व्यर्थ जिद की। अब मुझे समझ में आ गया कि आपने ऐसा क्यों कहा था। उस वक्त मैंने आपकी बात मानी होती तो आज मेरी ऐसी स्थिति नहीं होती। आज मैं फाँसी पर नहीं चढ़ाया जाता।' गुरूजी ने शिष्य से कहा, 'जो हो गया वह ठीक है मगर क्या इसके बाद तुम मेरी आज्ञा मानने के लिये तैयार हो?** तब शिष्य ने अपनी गलती स्वीकारते हुये गुरूजी से कहा, **'अब आप जो कहेंगे, वही मैं करूँगा। फिर चाहे वह बात तार्किक लगे या अतार्किक लगे, अब आपकी आज्ञा मानने की मेरी पूरी तैयारी है।'** तब गुरूजी ने उसे कहा, 'तुम राजा के सामने मुझसे कहना कि मुझे आज फाँसी पर चढ़ना है, मैं ही फाँसी पर चढ़ूँगा और कोई नही।' यह सुनकर शिष्य ने सोचा, 'मैं तो उन्हे इसलिये याद कर रहा था कि गुरूजी आयेगे और मुझे फाँसी से बचायेंगे मगर गुरूजी तो उल्टा

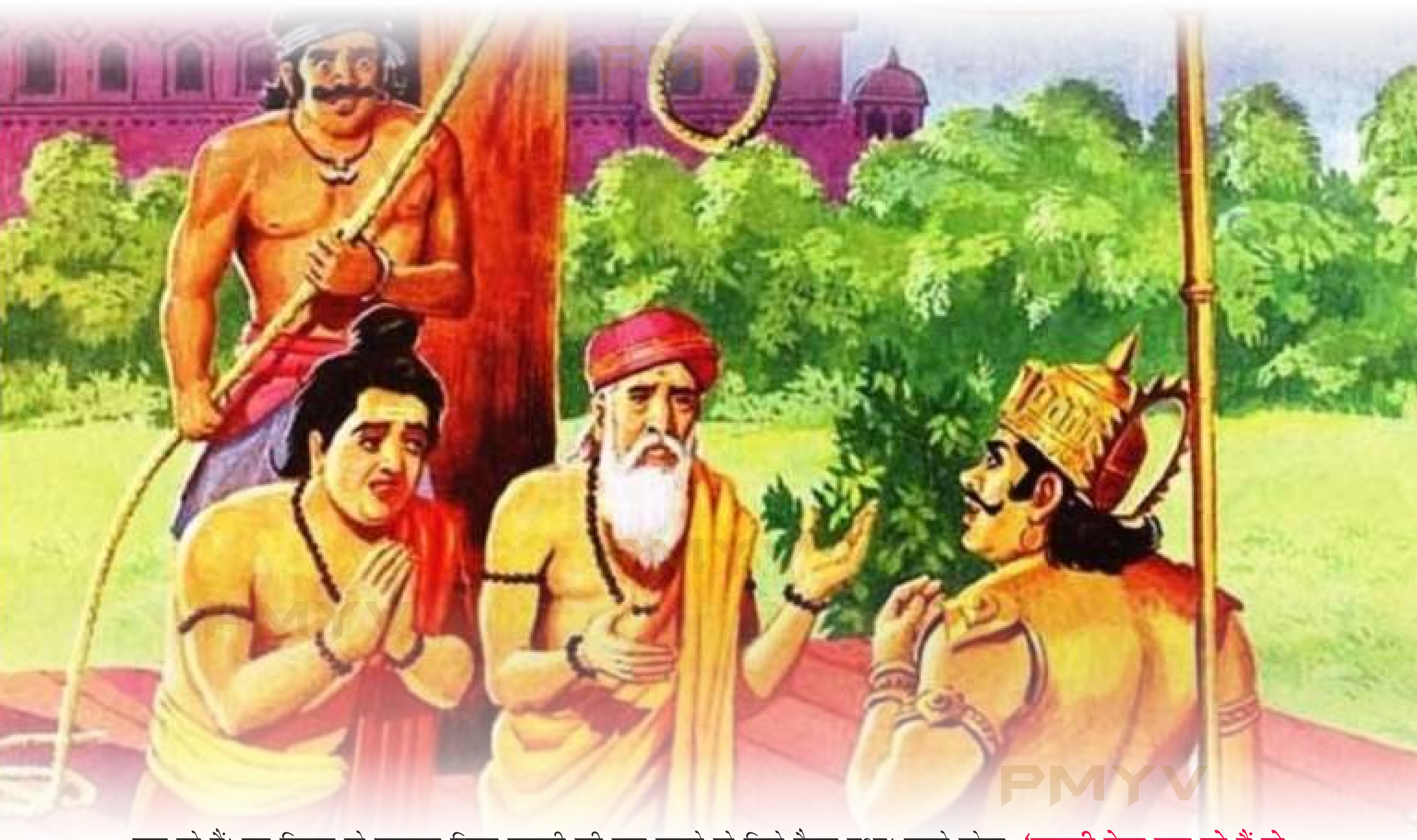

कह रहे हैं। इस विचार के बावजूद शिष्य गुरूजी की बात मानने के लिये तैयार हुआ। उसने सोचा, **'गुरूजी ऐसा कह रहे हैं तो जरूर कोई कारण होगा।' उसके मन में ऐसा भी विचार आया कि 'कम से कम आखिरी घड़ी में सुकून तो रहेगा कि अंतिम समय में मैंने गुरूजी का कहा माना, सत्य की बात सुनी।**

जब राजा के सामने उस शिष्य को लाया गया तब **गुरूजी ने राजा से कहा, 'मैं आज ही फाँसी पर चढ़ूँगा।' गुरूजी की बात सुनकर शिष्य को आश्चर्य हुआ कि गुरूजी क्या कह रहे है।** शिष्य ने कहा, **'मैने वचन दिया है तो मैं ही फाँसी पर चढ़ूँगा।** गुरूजी ने कहा, **'मुझे ही फाँसी पर चढ़ाओ।'** शिष्य ने फिर से जवाब दिया, **'नही, मुझे फाँसी पर चढ़ाओ।'** **इस तरह गुरूजी और शिष्य दोनों फाँसी पर चढ़ने के लिये झगड़ा करने लगे।** उनका झगड़ा देखकर राजा ने पूछा, 'आप दोनों फाँसी पर चढ़ने के लिये झगड़ा क्यों कर रहे है? **तब गुरूजी ने राजा को बताया, 'इस वक्त जो भी फाँसी पर चढ़ेगा, वह स्वर्ग में ही जायेगा।' राजा को स्वर्ग की कल्पनायें भी बताई गई। राजा ने जब यह सुना कि इस शुभ मुहूर्त में जो फांसी पर चढ़ेगा, वह स्वर्ग में जायेगा तो उसने कहा, 'कोई फाँसी पर नहीं चढ़ेगा, मुझे फाँसी पर चढ़ना है।** कहानी के अंत में **गुरूजी ने उस राजा (तोलू मन) को ही फाँसी पर लटकने के लिये उकसाया क्योंकि गुरूजी जानते थे कि मुर्ख राजा मरेगा तो राज्य में सभी लोग खुश रहेंगे।** फिर भले ही दाल सस्ती हो जाये, मिठाई महँगी हो जाये मगर यह सही है। **अंत में राजा को फाँसी दी गई, राजा**

मर गया और गुरू-शिष्य वहाँ से चले गये। उस राज्य के सिपाही, जो भागदौड़ कर रहे थे वे भी खुश हो गये, उनके दुःखों का भी अंत हुआ।

हमारी हालत ऐसी है कि अंधेरे में खड़ा आदमी अंधेरे से ही प्रकाश का अनुमान लगाये उसके पास और कोई उपाय नहीं है। यद्यपि अंधकार भी प्रकाश का ही धीमा रूप है, अंधकार भी प्रकाश के बहुत कम होने की स्थिति है। कोई अंधकार ऐसा नहीं है जहां प्रकाश न हो। क्षीण होगा। और क्षीण भी कहना ठीक नहीं है, सिर्फ हमारी इंद्रियों की पकड़ के लिये क्षीण है। हमारी इंद्रियां नहीं पकड़ पाती अन्यथा हमारे पास से इतने बड़े प्रकाश के बवंडर निकल रहे हैं जिसका कोई हिसाब नहीं, हम देख ले तो हम अंधे हो जाये। लेकिन हमारी इंद्रियां उनको नहीं पकड़ पाती । अंधेरा हो जाता है। जब तक एक्स-रे नहीं थी, हम सोच भी नहीं सकते थे कि आदमी के भीतर भी किरणें आर-पार हो रही हैं। हम सोच भी नहीं सकते थे कि आदमी के भीतर की हड्डी की तस्वीर भी किसी दिन बाहर आ जायेगी। आज नहीं कल और गहरी किरण खोज ली जायेगी और हम एक बच्चे के, मां के पेट में जो पहला अणु है, उसके आर-पार किरण को डाल सकेंगे किसी दिन तो हम उसकी पूरी जिंदगी देख लेंगे कि वह क्या-क्या हो जायेगा। इसकी सारी संभावनायें है।

हमारे पास से बहुत तरह का प्रकाश गुजर रहा है, हमारी आंख नहीं पकड़ती। नहीं पकड़ती यानी हमारे लिये अंधेरा है। जिसे हम अंधेरा कहते है, उसका कुल मतलब इतना ही है कि ऐसा प्रकाश जिसे हम नहीं पकड़ रहे है, इससे ज्यादा नहीं। लेकिन फिर भी अंधेरे में खड़े होकर कोई आदमी प्रकाश के बाबत जो भी अनुमान लगायेगा वे गलत होंगे। माना कि अंधेरा प्रकाश का एक ही रूप है, फिर भी अंधेरे से प्रकाश के बाबत जो भी अनुमान लगाये जायंगे वे गलत होंगे। माना कि मृत्यु भी अमृत का एक रूप है, फिर भी मृत्यु से अमृत के बाबत जो भी अनुमान लगाये जायंगे वे गलत होंगे। हम अमृत को जान ले तो ही कुछ होता है, अन्यथा कुछ भी नहीं होता।

सचेतन रूप से हम चुनते नहीं कि हम जन्म ल सचेतन रूप से सिर्फ एक ही मौका आता है चुनने का, वह तब आता है जब पूरी तरह व्यक्ति स्वयं को जान लिया होता है। वह घटना घट गई होती है जिसके आगे पाने को कुछ नहीं होता। ऐसा क्षण आ जाता है जब वह व्यक्ति कह सकता है कि अब मेरे लिये कोई भविष्य नहीं है, क्योंकि मेरे लिये कोई वासना नहीं है। ऐसा कुछ भी नहीं है जो मैं न पाऊं तो मेरी कोई पीड़ा है। यह बहुत ही शिखर का क्षण है-पीक। इस शिखर पर ही पहली दफा स्वतंत्रता मिलती है। यह बड़े मजे की बात है और जीवन के रहस्यों में से एक कि जो चाहेंगे कि स्वतंत्र हों वे स्वतंत्र नहीं हो पाते हैं और जिसकी अब कोई चाह नहीं रहीं वे स्वतंत्र हो जाते हैं। जो चाहते हैं कि यहां जन्म ले लें उनके लिये कोई उपाय नहीं है और जो अब इस स्थिति में है कि कहीं जन्म लेने का कोई सवाल न रहा और वह इस सुविधा में है कि वह चाहे तो कहीं ले ले। लेकिन यह भी एक ही जन्म के लिये संभव हो सकता है। इसलिये नहीं कि एक जन्म के बाद उसे स्वतंत्रता नहीं रह जायगी, इसलिये नहीं कि एक जन्म के बाद स्वतंत्रता का उपयोग करने का भाव भी खो जायेगा। वह अभी रहेगा। स्वतंत्रता मिलते ही इस जन्म में यदि आपको घटना घट गई परम अनुभव की, तो स्वतंत्रता तो मिल गई आपको लेकिन जैसा कि सदा होता है, स्वतंत्रता मिलने के साथ ही स्वतंत्रता का उपयोग करने की जो भाव-दशा है वह एकदम नहीं खो जायेगी। उसका अभी उपयोग किया जा सकता है। जो बहुत गहरे जानते हैं वे कहेंगे, यह भी एक बंधन है।

परमात्मा तो चौबीस घड़ी चारों तरफ मौजूद है। लेकिन प्यास न होने से कोई उसे काशी खोजने जायेगा, कोई कैलाश खोजने जायेगा। प्यास न होने से हम कहीं और खोजने जाना पड़ता है। प्यास हो तो श्वास-श्वास में, हवा के कण-कण में, वृक्ष के पत्ते-पत्ते में वह मौजूद है। वही मौजूद है तो कोई भी नहीं है। उसके अतिरिक्त और किसी का कोई अस्तित्व नहीं है। लेकिन उसका इमें कोई पता नहीं चलता। उसका हमें कोई पता नहीं चलेगा। नही चलेगा इसलिये कि **जैसा यह बाहर चल रहा है, ऐसा ही उपद्रव हम सबके भीतर भी चल रहा है। विचारों का झंझावात है भीतर, वह चल रहा है जोर से। हम उसमें लगे हैं। खाली जगह का कोई पता नहीं चलता। खाली जगह का बोध ही नहीं होता। हम भी रोशनी चाहते हैं, लेकिन अमावस्या की काली रात कौन चाहेगा?** हम भी मिलना चाहते है, लेकिन विरह कौन भोगेगा? **हम भी परमात्मा के आनंद में डूबना चाहते हैं, लेकिन उसकी पीड़ा? हमने किसी मां को बच्चा पैदा होते देख लिया है और जब बच्चा पैदा होता है और मां की आंख पहली बार अपने बच्चे को देखती है, तो उसकी आंखों में आनंद का उच्चतम भाव आता है। लेकिन प्रसव की पीड़ा कौन भोगेगा? वह प्रसव की पीड़ा के बाद की यह मुस्कान है।**

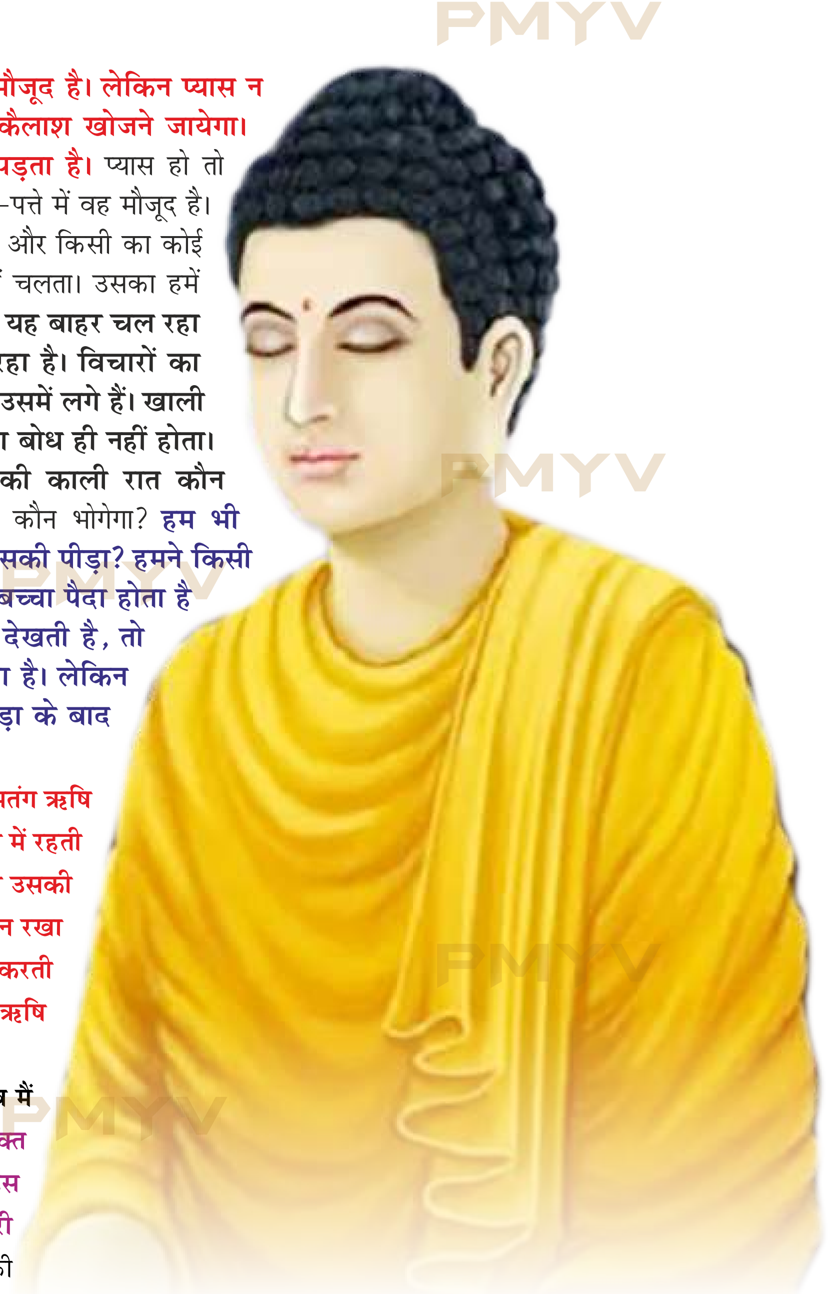

शबरी का जीवन भगवत् प्रेम से ओत-प्रोत रहा। वह मतंग ऋषि के सानिध्य में उनके आश्रम के समीप ही एक कुटिया में रहती थी। ऋषि के आश्रम पर रहकर उनकी सेवा करना ही उसकी दिनचर्या थी। उसने मतंग ऋषि को ही अपना गुरू मान रखा था, अतः गुरू के आदेश का पालन वह तत्परता से करती थी, शबरी एक सदाचारवान् भक्ति परायण स्त्री थी। ऋषि उसकी सेवा से प्रसन्न थे।

एक दिन मतंग ऋषि ने शबरी से कहा अब मैं यह देह त्याग करूंगा । तुम इसी आश्रम पर रहना **भक्त वत्सल प्रभु श्रीराम अपने अनुज लक्ष्मण सहित इस आश्रम पर आयेंगे भगवान् श्रीराम का दर्शन ही तुम्हारी सेवा का सर्वोत्तम फल होगा।** राम अपनी पत्नी सीता की खोज करते हुये यहां आयेंगे, तुम उन्हें सुग्रीव का पता बता देना प्रभु राम तुम पर कृपा करेंगे। **इसके बाद मतंग ऋषि ने योग-विधि से अपनी देह त्याग दी।** शबरी को अपने गुरू के शब्दो पर पूर्ण विश्वास था, वह प्रभु श्रीराम के आने की बाठ जोहने लगी, **शबरी का मन रामाकार हो गया उसकी दिनचर्या में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया। वह प्रतिदिन कुटिया तथा मार्ग की सफाई करती । ऋतु के अनुसार पुष्पों और फलों को डलिया में रखती। पूरे समय वह राम के आने की बाट देखती । एक ही विचार उनके मन में समाया हुआ था कि राम आयेंगे।** राम कब आ जाये, यही सोचकर वह दिन-रात सचेत रहती थी।

शबरी के तन- मन की स्थिति ऐसी हो गयी थी कि तनिक-सी आहट होने पर या वृक्षों के पत्तों के खड़-खड़ाने पर भी वह कुटिया के बाहर निकलकर दूर तक देखती कि कहीं प्रभु श्रीराम के आने की यह आवाज हो। **उसने श्रद्धा-विश्वास और प्रीति के साथ अपने मन की डोर श्रीराम से बांध रखी थी। भगवान् श्रीराम के आने का इन्तजार करते-करते वह वृद्धा हो गयी। भगवान् राम के आतिथ्य-सत्कार की तैयारी ही शबरी की जीवनचर्या थी। यही उसकी योग-साधना थी, राम का नाम ही उसके अन्तःकरण में था और राम का नाम ही उसका मंत्र-जप था। वह सहज योग से भक्तिमार्ग पर अग्रसर हो गयी।**

शबरी की ऐसी दिनचर्या देखकर उस वन के अन्य ऋषि-मुनि प्रायः कहते थे कि भला तत्त्व वेत्ता, तपस्वी एवं सिद्ध पुरूषों के आश्रमों को छोड़कर प्रभु श्रीराम उसकी कुटिया पर क्यों आयेंगे? लेकिन शबरी को इस प्रकार की बातों का मलाल नही होता था क्योंकि **वह दिव्य योग की स्थिति में पहुँच चुकी थी। उसे निन्दा-स्तुति, लाभ-हानि तथा जीवन-मृत्यु से कोई वास्ता नहीं रहा वह प्रति पल श्रीराम के आने की बाट जोहती रहती थी।**

एक दिन शबरी ने देखा कि वनवासी वस्त्र धारण किये धनुर्धारी श्रीरामजी अपने अनुज लक्ष्मण सहित उसके आश्रम पर आ गये। राम को देखते ही व आत्म विभोर होकर उनके चरणों पर गिर गयी। वह पूजा-अर्चना, विनती तथा स्वागत-सत्कार करना बिल्कुल भी नहीं जानती थी, प्रभु राम ने उसे उठाया।

शबरी ने कुछ संभलकर राम और लक्ष्मण को आसन पर बैठाया और फल उनके सामने रखकर उन्हें खिलाने लगी। प्रभु राम शबरी के द्वारा दिये गये फल प्रसन्नता से खा रहे थे, शबरी की प्रभु भक्ति तथा भगवत् प्रेम अतुलनीय था।

शबरी ने हाथ जोड़कर कहा प्रभु-मैं पूजा-पाठ, मंत्र जप तथा योग-विधि कुछ भी नहीं जानती हूँ मेरे गुरू जी मतंग ऋषि ने अपनी देह का त्याग करते समय मुझसे कहा था कि इसी आश्रम पर तुम्हारे पास राम अनुज लक्ष्मण सहित आयेंगे, मैं उसी दिन से आपके आने की राह देख रही थी। आज आप आ गये मैं आपके दर्शन करके धन्य हो गयी! श्रीराम ने कहा हे भामिनि! मैं केवल भक्ति का नाता मानता हूँ तुम्हारे अन्दर तो भक्त के समस्त गुण है।

''कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउं एक भगति कर नाता''

भगवान् श्रीराम ने शबरी को नव भक्ति का उपदेश देते हुये कहा 'पहली भक्ति सन्तों के पास निवास करना अर्थात् सत्संग करना है। गुरू कथा प्रसंगों में प्रेम होना दूसरे प्रकार की भक्ति है। गर्व रहित होकर गुरू के चरण कमलों की सेवा करना तीसरी भक्ति है। कपट त्याग करके गुरू गुणगान करना चौथे प्रकार की भक्ति है। गुरू नाम का जप करना तथा गुरूमय में दृढ़ विश्वास रखना पांचवीं भक्ति है। इन्द्रियों का निग्रह, शील-स्वभाव, बहुत से कार्यो से वैराग्य तथा निरन्तर सन्त-पुरूषों के धर्माचरण में लगे रहना छठे प्रकार की भक्ति है। जगत् को समान भाव से गुरूमय स्वरूप में ओत-प्रोत देखना तथा सन्तों को गुरूमय से भी अधिक मानना सातवीं भक्ति है जो कुछ प्राप्त हो जाये, उसी पर सन्तोष करना तथा स्वप्न में भी दूसरों के दोष नहीं देखना आठवीं भक्ति है। भक्ति का नवां प्रकार है सरलता, सब के साथ कपट रहित व्यवहार करना, हृदय में गुरू का भरोसा रखना तथा किसी भी स्थिति में हर्ष और विषाद का नहीं होना।'

श्रीरामचरितमानस में श्री राम द्वारा शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश बहुत ही सुन्दर शब्दावली में इस प्रकार वर्णित है-

नवधा भीगति कहउँ तोहि पाहीं। सावधान सुनु धरू मन माहीं, प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।।

दूसरि रति मम कथा प्रसंगा, गुरू पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान।।

चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान, मंत्र जप मम दृढ़ विस्वासा। पंचम भजन सो बेद प्रकासा।।

छठ दम सील बिरति बहु करमा, निरत निरंतर सज्जन धरमा, सातवँ सम मोहि मय जग देखा॥
मोतें संत अधिक करित लेखा, आठवँ जथलाभ संतोषा, सपनेहूँ नहीं देखइ परदोषा॥
नवम सरल सब सन छलहीना, मम भरोसहियँ हरष न दीना॥

भगवान् श्रीराम ने शबरी को समझाया कि हे भामिनि! **जिस स्त्री-पुरूष अथवा जड़-चेतन में इन नौ प्रकार की भक्तियों में से एक भी प्रकार की भक्ति होती है, वह मुझे प्रिय होता है। फिर तुम्हारे में तो सभी प्रकार की दृढ़ भक्ति है।** मेरे दर्शन का यह अनुपम फल प्राप्त होता है कि जीव अपने सहज स्वरूप को प्राप्त हो जाता है। अतः ऐसा भाव योगियों को भी दुर्लभ है, वहीं दिव्य भाव आज तुम्हारे लिये सुलभ हो गया है। भगवान् के पूछने पर शबरी ने उन्हें सुग्रीव का पता बताकर उनसे मित्रता करने की सलाह दी, जिससे सीता की खोज हो सके। भक्तिमती शबरी ने राम का दर्शन कर उनके चरण कमलों को हृदय में धारण किया और प्रभु श्रीराम के समक्ष ही उसने योगाग्नि से देह त्याग दी। उसने वह पद प्राप्त किया, जहां से संसार में वापस आना नहीं पड़ता है। शबरी कि भक्तिमयी जीवनचर्या प्रभु-भक्तों को प्रेरणा प्रदान करती है। ईशावतार राम ने शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश प्रदान कर भक्ति पथ पर अग्रसर लोगों का कल्याण किया है।

हमने भगवान श्रीराम जी की मुस्कुराती तस्वीर को ही ख्याल में रखा है और हम सोचते हैं कि कब वह मौका आये कि हम भी ऐसे ही आनंद से भर जायें। लेकिन हम वह तस्वीर छोड़ देते है जो रोती हुई है, जब प्राण आंसू-आसूं हो गये हैं जब कि हृदय क्षार-क्षार है, जब कि सिवाय आंसुओं के और कुछ भी नहीं हैं जब कि सिवाय पुकार के और कुछ भी नहीं हैं। वह हमारे ख्याल में नहीं है। परमात्मा रूपी सद्गुरू को आधा नही चुना जा सकता, उसको पूरा ही चुनना पड़ेगा, उसका पहला हिस्सा पहले पूरा करना पड़ेगा, तब दूसरा हिस्सा पूरा होता है। फूल तो कोई भी पसंद कर लेता है, लेकिन बीज बोने की मेहनत भी है और फूल को तो कोई भी मुस्कुरा कर प्राप्त कर लेता है, साथ में जो काँटे होते है। उनको कोई ग्रहण नहीं करता।

परम् पूज्य सद्गुरूदेव
कैलाश चन्द्र श्रीमाली जी